अंक : 1, मार्च 2022

LEISA INDIA

लीज़ा इण्डिया

विशेष हिन्दी संस्करण

लीज़ा इण्डिया

विशेष हिन्दी संस्करण
मार्च 2022, अंक 1

यह अंक लीज़ा इण्डिया टीम के साथ मिलकर जी०ई०ए०जी० द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है, जिसमें लीज़ा इण्डिया में प्रकाशित अंग्रेजी भाषा के कुछ मूल लेखों का हिन्दी में अनुवाद एवं संकलन है।

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप
224, पुर्दिलपुर, एम०जी० कालेज रोड,
पोस्ट बाक्स 60, गोरखपुर- 273001
फोन : +91-551-2230004,
फैक्स : +91-551-2230005
ईमेल : geagindia@gmail.com
वेबसाइट : www.geagindia.org

ए.एम.ई. फाउण्डेशन
नं० 204, 100 फीट रिंग रोड, 3rd फेज़, 2nd ब्लाक,
3rd स्टेज, बनशंकरी, बैंग्लोर- 560085, भारत
फोन : +91-080-26699512,
+91-080-26699522
फैक्स :+91-080-26699410,
ईमेल : leisaindia@yahoo.co.in

लीज़ा इण्डिया
लीज़ा इण्डिया अंग्रेजी में प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका है, जो इलिया की सहभागिता से ए.एम.ई. फाउण्डेशन बैंग्लोर द्वारा प्रकाशित होती है।

मुख्य सम्पादक
के.वी.एस. प्रसाद, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

प्रबन्ध सम्पादक
टी.एम.राधा., ए.एम.ई. फाउण्डेशन

अनुवाद समन्वय
अर्चना श्रीवास्तव, जी.ई.ए.जी.
बी.एम. संजना, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

प्रबन्धन
रूक्मिणी जी.जी., ए.एम.ई. फाउण्डेशन

लेआउट एवं कवर डिजाईन
राजकान्ती गुप्ता, जी.ई.ए.जी.

छपाई
कस्तूरी ऑफसेट, गोरखपुर

आवरण फोटो
जी०ई०ए०जी०

लीज़ा इण्डिया पत्रिका के अन्य क्षेत्रीय सम्पादन
तमिल, कन्नड़, उड़िया, तेलगू, मराठी एवं पंजाबी

सम्पादक की ओर से लेखों में प्रकाशित जानकारी के प्रति पूरी सावधानी बरती गई है। फिर भी दी गई जानकारी से सम्बन्धित किसी भी त्रुटि की जिम्मेदारी उस लेख के लेखक की होगी। माइजेरियर के सहयोग एवं जी०ई०ए०जी० के समन्वयन में ए०एम०ई० द्वारा प्रकाशित

लीज़ा

कम बाहरी लागत एवं स्थायी कृषि पर आधारित लीज़ा उन सभी किसानों के लिए एक तकनीक और सामाजिक विकल्प है, जो पर्यावरण सम्मत विधि से अपनी उपज व आय बढ़ाना चाहते हैं क्योंकि लीज़ा के अन्तर्गत मुख्यतः स्थानीय संसाधनों और प्राकृतिक तरीकों को अपनाया जाता है और आवश्यकतानुसार ही बाह्य संसाधनों का सुरक्षित उपयोग किया जाता है।

लीज़ा पारम्परिक और वैज्ञानिक ज्ञान का संयोग है, जो विकास के लिए आवश्यक वातावरण तैयार करता है। यह भी मुख्य है कि इसके द्वारा किसानों की क्षमता को विभिन्न तकनीकों से मजबूत किया जाता है और खेती को बदलती जरूरतों और स्थितियों के अनुकूल बनाया जाता है, साथ ही उन महिला एवं पुरुष किसानों व समुदायों का सशक्तिकरण होता है, जो अपने ज्ञान, तरीकों, मूल्यों, संस्कृति और संस्थानों के आधार पर अपना भविष्य बनाना चाहते हैं।

ए.एम.ई. फाउण्डेशन, डक्कन के अर्द्वशुष्क क्षेत्र के लघु सीमान्त किसानों के बीच विकास एजेन्सियों के जुड़ाव, अनुभव के प्रसार, ज्ञानवर्द्वन एवं विभिन्न कृषि विकल्पों की उत्पत्ति द्वारा पर्यावरणीय कृषि को प्रोत्साहित करता है। यह कम लागत प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन के लिए पारम्परिक ज्ञान व नवीन तकनीकों के सम्मिश्रण से आजीविका स्थाईत्व को बढ़ावा देता है।

ए.एम.ई. फाउण्डेशन गांव में इच्छुक किसानों के समूह को वैकल्पिक कृषि पद्धति तैयार करने व अपनाने में सक्षम बनाने हेतु उनके साथ जुड़कर सघन रूप से काम कर रही है। यह स्थान अभ्यासकर्ताओं व प्रोत्साहकों के लिए उनकी देखने–समझने की क्षमता में वृद्धि करने हेतु सीखने की परिस्थिति के तौर पर है। इससे जुड़ी स्वयं सेवी संस्थाओं और उनके नेटवर्क को जानने के लिए इसकी वेबसाईट देखें–(www.amefound.org)

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप एक स्वैच्छिक संगठन है, जो स्थाई विकास और पर्यावरण से जुड़े मुद्दों पर सन् 1975 से काम कर रहा है। संस्था लघु एवं सीमान्त किसानों, आजीविका से जुड़े सवालों, पर्यावरणीय संतुलन, लैंगिक समानता तथा सहभागी प्रयास के सिद्धान्तों पर सफलतापूर्वक कार्य कर रही है। संस्था ने अपने 40 साल के लम्बे सफर के दौरान अनेक मूल्यांकनों, अध्ययनों तथा महत्वपूर्ण शोधों को संचालित किया है। इसके अलावा अनेक संस्थाओं, महिला किसानों तथा सरकारी विभागों का आजीविका और स्थाई विकास से सम्बन्धित मुद्दों पर क्षमतावर्धन भी किया है। आज जी0ई0ए0जी0 ने स्थाई कृषि, सहभागी प्रयास तथा जेण्डर जैसे विषयों पर पूरे उत्तर भारत में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है। इसकी वेबसाईट देखें–(www.geagindia.org)

माइजेरियर वर्ष 1958 में स्थापित जर्मन कैथोलिक बिशप की संस्था है, जिसका गठन विकासात्मक सहयोग के लिए हुआ था। पिछले 50 वर्षों से माइजेरियर अफ्रीका, एशिया और लातिन अमेरिका में गरीबी के विरूद्ध लड़ने के लिए प्रतिबद्ध है। जाति, धर्म व लिंग भेद से परे किसी भी मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए यह हमेशा तत्पर है। माइजेरियर गरीबी और हानियों के विरूद्ध पहल करने के लिए प्रेरित करने में विश्वास रखता है। यह अपने स्थानीय सहयोगियों, चर्च आधारित संगठनों, गैर सरकारी संगठनों, सामाजिक आन्दोलनों और शोध संस्थानों के साथ काम करने को प्राथमिकता देता है। लाभार्थियों और सहयोगी संस्थाओं को एक साथ लेकर यह स्थानीय विकासात्मक क्रियाओं को साकार करने और परियोजनाओं को क्रियान्वित करने में सहयोग करता है। स्थिर चुनौतियों की प्रतिक्रिया में माइजेरियर द्वारा अपनी सहयोगी संस्थाओं के साथ किये जा रहे कार्यों को जानने के लिए इसकी वेबसाइट देखें (www.misereor.de; www.misereor.org)

जीवामृत : वास्तविक तरल सोना/स्वर्ण

टेक्नोसर्व

पडेरू महिलाओं ने यह सिद्ध कर दिया है कि कम संसाधनों तक पहुँच होने के बावजूद, कुछ प्रारम्भिक सहयोग और प्रशिक्षण के साथ खेती की कृषि–पारिस्थितिकी पद्वतियों को अपनाना सम्भव है। जैविक खेती का उपयोग खेती के हरित स्वरूप की तरफ एक छोटा सा चरण है, लेकिन विशेष रूप से फार्मर प्रोड्यूसर संगठनों के माध्यम से इसे बड़े पैमाने पर बढ़ाने की क्षमता है।

अनुक्रमणिका

विशेष हिन्दी संस्करण, मार्च 2022

5 जीवामृत : वास्तविक तरल सोना / स्वण
टेक्नोसर्व

10 बेहतर प्राप्ति के लिए मूल्य संवर्धन
अयगरी रामलाल, धन्धापानी राजू, मधुलिका सिंह, अजय कुमार एवं अम्बिका राजेन्द्रन

12 बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों हेतु सब्ज़ियों का जलवायु अनुकूलित बीज उत्पादन : अपना खेत, अपना बीज
अर्चना श्रीवास्तव

14 लीची प्रसंस्करण : एक आशाप्रद मूल्य संवर्धन
अलेमवती पोंगनर, एस.के. पूरबे, बिनोद कुमार, विशाल नाथ, एस.डी. पाण्डेय एवं अभय कुमार

18 भारत में पारम्परिक कृषि–पशु चारागाह प्रणाली के माध्यम से रास्ता बनाना
रितुजा मित्रा एवं साहिथ गोवर्धनम.

बेहतर प्राप्ति के लिए मूल्य संवर्धन

अयगरी रामलाल, धन्धापानी राजू, मधुलिका सिंह, अजय कुमार एवं अम्बिका राजेन्द्रन

छोटे और सीमान्त किसानों द्वारा अपनी खेती सम्बन्धी चुनौतियों से सफलतापूर्वक निपटने में सहयोग देने की फार्मर प्रोड्यूसर संगठनों के पास विशाल क्षमता है। मूल्य संवर्धन में इन संगठनों का क्षमता वर्धन करने से बेहतर गुणवत्ता वाले उत्पाद मिलेंगे, उनकी मोल–भाव करने की क्षमता में सुधार होगा, अतिरिक्त रोजगार के अवसर उपलब्ध होंगे और बेहतर प्राप्ति होगी।

बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों हेतु सब्ज़ियों का जलवायु अनुकूलित बीज उत्पादन : अपना खेत, अपना बीज

अर्चना श्रीवास्तव

पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार के बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों में सब्ज़ियों की खेती करने वाले किसानों के सामने सबसे बड़ी समस्या समय से गुणवत्तापूर्ण बीजों की उपलब्धता है। बाजार में उपलब्ध हाईब्रिड बीजों को किसान अगले वर्ष के संरक्षित नहीं कर सकता और परम्परागत बीज लुप्तप्राय होते जा रहे हैं। इस समस्या से निपटने के लिए भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय के सीड डिवीजन से सहायता प्राप्त कोर सपोर्ट परियोजनान्तर्गत गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप के किसानों ने परम्परागत बीजों को तैयार कर संरक्षित करते हुए अपना खेत एवं अपना बीज की दिशा में एक पहल प्रारम्भ किया है।

लीची प्रसंस्करण : एक आशाप्रद मूल्य संवर्धन

अलेमवती पोंगनर, एस.के. पूरबे, बिनोद कुमार, विशाल नाथ, एस.डी. पाण्डेय एवं अभय कुमार

फलों का प्रसंस्करण अक्सर उच्च निवेश से जुड़ा होता है। यही कारण है कि छोटे किसान फलों के मूल्य संवर्धन की दिशा में अग्रसर नहीं होते हैं। अपनी सरल तकनीक और प्रारम्भिक सहयोग देकर आईसीएआर ने बिहार के लीची की खेती करने वाले किसानों को उनके बड़े सपने पूरे करने में सहयोग प्रदान किया है।

भारत में पारम्परिक कृषि–पशु चारागाह प्रणाली के माध्यम से रास्ता बनाना

रितुजा मित्रा एवं साहिथ गोवर्धनम

पशु चारागाह / चराई और कृषि के बीच अर्न्तसम्बन्धों से हरित, पयार्वरणीय दृष्टि से स्थाई एवं वैश्विक अर्थव्यवस्था को परिवर्तित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की संभावना होती है। पूरे देश में पशु–चराई प्रणाली के बहुत से उदाहरणों के माध्यम से प्राकृतिक संसाधनों, स्थानीय जलवायु परिस्थितियों के प्रति अनुकूलन एवं मृदा उर्वरता बढ़ाने में पशुओं से तैयार खादों के कारण आर्थिक एवं पारिस्थितिक मूल्य निर्माण के प्रबन्धन के प्रति उनके ज्ञान पर समझ प्रदान करती है।

यह अंक...

सम्पादकीय,

लीज़ा इण्डिया हिन्दी विशेषांक का मार्च, 2022 अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। होली का त्यौहार बीतने के बाद एक तरफ रबी की फसल कटने की तैयारी हो रही है तो दूसरी तरफ फलों का मौसम आ रहा है। दिनोंदिन बढ़ती जलवायुविक अनिश्चितता के बीच किसानों के लिए फसलों एवं फलों का मूल्य संवर्धन कर अपनी आय में वृद्धि करना एक बेहतर विकल्प भी है और बड़ी चुनौती भी है। यद्यपि किसान एवं किसान संगठनों द्वारा फसलों एवं फलों के मूल्य संवर्धन की दिशा में प्रयास किये जा रहे हैं। इस बार पत्रिका में मुख्यतः इन्हीं प्रयासों को स्थान दिया गया है।

पत्रिका का पहला लेख ''जीवामृत : वास्तविक तरल सोना'' है, जो एक गैर सरकारी संगठन टेक्नासर्व के अनुभवों पर आधारित है। यह लेख संस्था द्वारा आंध्रप्रदेश की पडेरू आदिवासी महिलाओं को पोषण युक्त भोजन उपलब्ध कराने की दृष्टि से जैविक खेती की दिशा में की जा रही पहल को बताता है। संस्था ने पद्मश्री पुरस्कार प्राप्त श्री सुभाष पालेकर की शून्य बजट प्राकृतिक खेती मॉडल से प्रेरणा लेते हुए पोषणयुक्त गृहवाटिका तैयार करने के लिए आदिवासी महिलाओं को प्रशिक्षित एवं प्रेरित किया। पत्रिका का दूसरा लेख अयगरी रामलाल, धन्धापानी राजू, मधुलिका सिंह, अजय कुमार एवं अम्बिका राजेन्द्रन द्वारा लिखित ''बेहतर प्राप्ति के लिए मूल्य संवर्धन'' है। मेघालय में किसानों एवं किसान संगठनों द्वारा फल एवं मत्स्य मूल्य संवर्धन हेतु किये जा रहे प्रयासों पर आधारित इस लेख में बालाजी फार्मर प्रोड्यूसर द्वारा केला एवं मछली एवं उसके विभिन्न उत्पादों के मूल्य संवर्धन एवं विपणन के कार्यों को दर्शाया गया है।

अर्चना श्रीवास्तव द्वारा लिखित लेख ''बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों हेतु सब्ज़ियों का जलवायु अनुकूलित बीज उत्पादन : अपना खेत, अपना बीज'' है। इस लेख में जी0ई0ए0जी0 एवं विज्ञान व प्रौद्योगिकी मंत्रालय, भारत सरकार के सीड डिवीजन के अन्तर्गत किसानों द्वारा जलवायु अनुकूलित सब्ज़ियों के परम्परागत बीज उत्पादन एवं विपणन के विषय में दर्शाया गया है। चौथे लेख ''लीची प्रसंस्करण : एक आशाप्रद मूल्य संवर्धन'' को अलेमवती पोंगनर, एस के पूरबे, विनोद कुमार, विशाल नाथ, एस डी पाण्डेय एवं अभय कुमार ने लिखा है। बिहार का शाही फल लीची जल्द खराब होने जैसी चुनौतियों के बावजूद किसानों के लिए आशा का स्रोत है।

आई0सी0ए0आर0–लीची पर राष्ट्रीय शोध संस्थान से तकनीकी सहायता एवं प्रशिक्षण प्राप्त कर मुजफ्फरपुर के किसानों ने बिना किसी बड़े निवेश के लीची से जैम, स्कवैश, जूस जैसे उत्पादों को तैयार विपणन करना प्रारम्भ कर दिया है और सफलता भी पाई है।

पत्रिका का अन्तिम लेख ''भारत में पारम्परिक कृषि–पशु चारागाह प्रणाली के माध्यम से रास्ता बनाना'' है, जो रितुजा मित्रा एवं साहिथ गोवर्धनम द्वारा लिखा गया है। इस लेख में लेखकद्वय ने पशु चारागाह / चराई और कृषि के बीच अन्तर्सम्बन्धों को हरित, पर्यावरणीय दृष्टि से स्थायी एवं वैश्विक अर्थव्यवस्था को परिवर्तित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाला बताया है। इसके लिए उन्होंने पूरे देश में पशु चराई प्रणाली के बहुत से उदाहरणों को प्रस्तुत किया है जो प्राकृतिक संसाधनों, स्थानीय जलवायु परिस्थितियों के प्रति अनुकूलन और मृदा उर्वरता बढ़ाने में पशुओं से तैयार खादों के कारण आर्थिक व पारिस्थितिक मूल्य निर्माण के प्रबन्धन के प्रति उनकी जानकारी को सामने लाती है।

जैविक खाद, फसलों व फलों का मूल्य संवर्धन तथा पशु एवं किसान के बीच के अन्तर्सम्बन्धों जैसे कई विषयों को समेटे हुए इस पत्रिका की उपयोगिता एवं व्यवहारिकता पर आपके सुझावों व प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा में...

• सम्पादक मण्डल

जीवामृत
वास्तविक तरल सोना/ स्वर्ण

टेक्नोसर्व

पडेरू महिलाओं ने यह सिद्ध कर दिया है कि कम संसाधनों तक पहुँच होने के बावजूद, कुछ प्रारम्भिक सहयोग और प्रशिक्षण के साथ खेती की कृषि–पारिस्थितिकी पद्धतियों को अपनाना सम्भव है। जैविक खेती का उपयोग खेती के हरित स्वरूप की तरफ एक छोटा सा चरण है, लेकिन विशेष रूप से फार्मर प्रोड्यूसर संगठनों के माध्यम से इसे बड़े पैमाने पर बढ़ाने की क्षमता है।

पूरी दुनिया में पिछले कुछ वर्षों से जैविक खेती चर्चा का एक विषय बनी हुई है। बिना रसायनों का उपयोग किये उगाये गये फलों और सब्ज़ियों के बाजार से प्रारम्भ होकर, आज जैविक शब्द दूध से लेकर अण्डा और कॉफी–चाय अर्थात् भोजन के हर रूप में विस्तारित हो चुका है। विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों में जैविक खाद्यों के स्वास्थ्य और पर्यावरणीय लाभों के बारे में उपभोक्ताओं की बढ़ती जागरूकता के साथ, पूरी दुनिया में अब जैविक खाद्यों का बाजार तेजी से बढ़ता जा रहा है और अनुमान है कि वर्ष 2020–2025 के बीच यह वृद्धि दर 16.4 प्रतिशत अनुमानित है।

जैविक खेती से उत्पादित खाद्य पदार्थ स्वास्थ्य की दृष्टि से लाभप्रद होते हैं, प्राकृतिक रसायनों एवं कीटनाशकों का उपयोग पर्यावरण की दृष्टि से बेहतर एवं लाभकारी होता है, इसलिए बाज़ार में इसकी माँग ज्यादा होती है। इसके साथ ही, खेती को स्थाई बनाने के लिए जैव उर्वरकों तथा अन्य सूक्ष्म तत्वों के उपयोग की तरफ भी अत्यधिक ध्यान दिया गया है। हालाँकि शहरी क्षेत्रों में अभी भी जैविक खाद्य पदार्थों को खरीदना एक स्टेटस का प्रतीक होने के कारण, जैविक और गैर जैविक खाद्य पदार्थों के मूल्यों में व्यापक अन्तर है। दूसरी तरफ, बेहतर फसल उपज प्राप्त करने के लिए किसानों को महँगे उर्वरकों, कीटनाशकों एवं अन्य दूसरे कृषि निवेशों पर निर्भर होने को मजबूर होना पड़ता है। यहाँ तक कि जब जैविक खेती की बात आती है, उस समय भी फसलों पर कीटों के नियन्त्रण को रोकने तथा स्वस्थ उत्पाद प्राप्त करने के लिए कुछ निवेशों पर निर्भर रहने की आवश्यकता होती है। तो अब सोचने की बात यह

पडेरू की आदिवासी महिलाएं

है कि भारत के भौगोलिक रूप से दुर्गम आदिवासी गाँवों में रहने वाले लोग अपने भोजन को जैविक पद्धति से कैसे उगाते हैं।

आंध्र प्रदेश में विशाखापत्तनम शहर से लगभग 100 किमी0 दूर, पहाड़ियों के ऊपर पडेरू आदिवासियों का एक छोटा गाँव मिनिमुलुरू है। शहर से विपरीत, मिनिमुलुरू काफी शान्त और नीरव है। यहाँ पर परजा आदिवासियों के घर हैं, जो राज्य में निवास करने वाले 33 आदिवासी प्रजातियों में से एक है। यहाँ सामान्यतः लोगों के पास 1—1.5 एकड़ खेत हैं, जिनमें बहुधा पुरूष व महिला दोनों को मेहनत करते देखा जा सकता है। यहां धान, हल्दी और कॉफी प्रमुख फसल है। आदिवासी समुदाय अपने भोजन के साथ— साथ अपनी आजीविका दोनों के लिए प्रकृति पर बहुत ज्यादा निर्भर करते हैं। लेकिन अध्ययन यह प्रदर्शित करते हैं कि आदिवासी समुदायों में विशेषकर महिलाओं को जितना पोषण चाहिए, उससे बहुत कम पोषण उनको मिलता है।

पहल

गरीबी उन्मूलन की दिशा में काम कर रहे एक एक गैर सरकारी संगठन टेक्नो सर्व ने वालमार्ट फाउण्डेशन के वित्तीय सहयोग से पडेरू क्षेत्र में ''आंध्र प्रदेश में छोटी जोत के किसानों की स्थाई आजीविका''नामक कार्यक्रम की शुरूआत की। इस कार्यक्रम का एक लक्ष्य आदिवासी महिलाओं को पोषण युक्त भोजन उपलब्ध कराने के साथ ही क्षेत्र में मृदा उर्वरता भी बढ़ाना था। पद्मश्री पुरस्कार प्राप्त श्री सुभाष पालेकर द्वारा शुरू किये गये शून्य बजट प्राकृतिक खेती मॉडल से प्रेरित होकर, टेक्नोसर्व टीम ने आदिवासी महिला किसानों को अपने घर के पीछे गृहवाटिका प्रारम्भ करने हेतु सहयोग प्रदान करने के उद्‌देश्य से उन्हें जैविक गृहवाटिका पर प्रशिक्षण देने का निर्णय किया। इससे एक तरफ तो छोटी जोत वाले किसान परिवारों की पोषण सुरक्षा सुनिश्चित होगी, वहीं दूसरी तरफ आर्थिक गतिविधियों में महिलाओं की सहभागिता बढ़ने से महिलाएं सशक्त होंगी और उन्हें अतिरिक्त आय उपार्जन में मदद भी मिलेगी।

सितम्बर, 2019 में कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। शुरूआत में परियोजना टीम ने विशाखापत्तम जिले के पडेरू और चिन्तपल्ली क्षेत्रों में 41 गाँवों की लगभग 1000 आदिवासी महिलाओं को प्रशिक्षण देना, बीज वितरित करना एवं अन्य

महामारी के दौरान, आत्मनिर्भर बनकर उभरी पडेरू आदिवासी समुदाय की महिलाएं अपने घर के पिछवाड़े सब्ज़ियां उगाकर न केवल अपने परिवार, वरन् गाँव के अन्य लोगों के लिए भी सहायक हो रही हैं।

सामुदायिक संदर्भ व्यक्ति द्वारा प्रशिक्षण

जीवामृत का प्रयोग

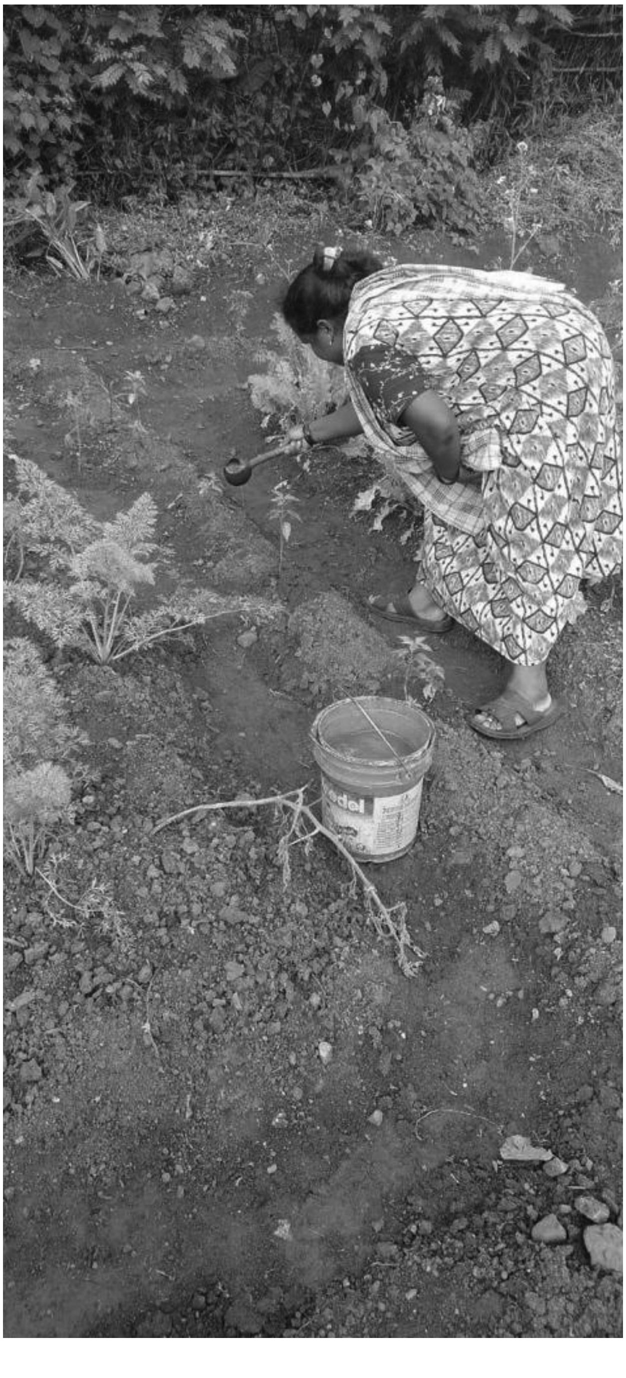

सहयोग प्रदान किया। बैगन, टमाटर, हरी मिर्च, फ्रेंच बीन, चना, मूली, चौलाई और पालक सहित कुल 8 प्रकार के बीजों का वितरण किया गया।

जीवामृत, तरल जैविक खाद

छोटी जोत वाले खेतिहर परिवारों की कम आमदनी को देखते हुए, पैसों की कमी के कारण उर्वरकों एवं कीटनाशकों तक पहुँच न होना एक बड़ी बाधा थी। इसके प्रत्युत्तर में, टीम ने महिलाओं को एक जैविक तरल खाद जीवामृत तैयार करने हेतु प्रशिक्षित करने का निश्चय किया, जिससे पौधों को पोषण मिलने के साथ ही मृदा उर्वरता भी उन्नत हो सके।

समुदायिक सन्दर्भ व्यक्तियों द्वारा सभी महिलाओं को 6 के समूह में बाँट दिया गया और टेक्नोसर्व कार्यकर्ताओं ने पूरी प्रशिक्षण प्रक्रिया के दौरान उन्हें सहयोग प्रदान किया। इसके पीछे मुख्य सोच यह सुनिश्चित करना था कि प्रशिक्षण के बाद, उर्वरकों के लिए महिलाओं को बाजार पर न निर्भर रहना पड़े। जैव उर्वरक मुख्य रूप से गाय का गोबर, गौमूत्र, काला गुड़, चना का बेसन, पानी एवं खेत की मेड़ की मिट्टी से तैयार किया गया था। यह सभी सामग्रियां महिलाओं की पहुँच में एवं हर समय आसानी से उपलब्ध हो जाने वाली थीं।

प्रशिक्षण के लिए, टीम ने प्रारम्भिक सहयोग के तौर पर महिलाओं को गुड़ एवं चना का बेसन उपलब्ध कराने का निश्चय किया। प्रत्येक महिला को 200 ग्राम गुड़ और 200 ग्राम चना का बेसन दिया गया, जो 20 लीटर जीवामृत तैयार करने के लिए पर्याप्त था। इन सामग्रियों की लागत प्रत्येक व्यक्ति के लिए लगभग 11रू0 आयी।

जीवामृत तैयार करने में लगने वाली अन्य सामग्रियां स्थानीय स्तर पर उपलब्ध होने वाली थीं और इसकी स्रोत महिलाएं स्वयं थीं। महिलाओं ने दो अथवा तीन परिवारों को मिलाकर एक उप समूह तैयार किया, जहाँ पर वे गाय का गोबर, गौमूत्र और मृदा एक साथ एकत्र करती थीं। इससे ये सामग्रियां उन महिलाओं के बीच वितरित करने में आसानी होने लगी, जिनके पास इनकी अनुपलब्धता थी।

एक बार जब सभी सामग्रियां एकत्रित हो गयीं, तब वास्तविक प्रशिक्षण प्रारम्भ किया गया। यद्यपि जीवामृत को सीमेण्ट के टैंक अथवा मिट्टी के बर्तन में बनाया जा सकता था, लेकिन अधिकाँश महिलाओं ने इसे प्लास्टिक के ड्रम में बनाने को वरीयता दी, जो अधिक आसान एवं अत्यधिक व्यवहारिक था। सामुदायिक सन्दर्भ व्यक्तियों एवं टीम के निर्देशन में, महिलाओं ने ड्रम में सामग्रियों को मिलाना प्रारम्भ कर दिया।

20 लीटर जैव उर्वरक तैयार करने के लिए महिलाओं ने सबसे पहले उसी अनुपात में पानी मिलाया। इसके बाद गाय का गोबर और गौमूत्र को डालकर अच्छी तरह मिलाया। इसके बाद, अन्य सामग्रियों जैसे– गुड़, बेसन एवं खेत के मेड़ की मिट्टी को डालकर उसे एक लकड़ी से अच्छी तरह मिला लिया। इसके बाद ड्रम को जूट बैग से ढँक कर प्रतिभागियों ने इस मिश्रण को सड़न हेतु एक छायादार स्थान पर रख दिया।

बाक्स 1 : 200 लीटर जीवामृत तैयार करने हेतु सामग्री

स्थानीय गाय का गोबर	10 किग्रा
गौमूत्र	10 लीटर
गुड़	2 किग्रा0
बेसन	2 किग्रा0
खेत की मेड़ की मिट्टी	2 किग्रा0
पानी	190 लीटर

तैयार जीवामृत को मिट्टी में पौधों की जड़ों में सीधे प्रयोग किया जा सकता है। इसके साथ ही इसे एक लीटर जीवामृत में 10 लीटर पानी मिलाकर फसलों पर छिड़काव भी कर सकते हैं।

प्रभाव

तैयार जैव उर्वरक को प्रतिभागी महिलाओं के बीच वितरित किया गया। यद्यपि महिलाओं ने सिर्फ एक ही सीजन में इस जीवामृत का उपयोग किया था, लेकिन परिणाम बेहद सकारात्मक रहे। प्रशिक्षण में प्रतिभाग करने वाली आदिवासी महिलाओं में से एक मंगम्मा ने कहा, ‘‘हम पहले भी अपने घर के पिछवाड़े सब्ज़ियां उगाते थे, लेकिन वे इतनी ताज़ी एवं स्वस्थ नहीं दिखती थीं। मैंने सामुदायिक सन्दर्भ व्यक्ति लक्ष्मी के निर्देशन में जीवामृत का उपयोग किया और इससे उन कीटों का पूरी तरह सफाया हो गया, जो हमारी फसलों को प्रभावित करते थे।’’

ओकेजी कार्यक्रम को देख रहे टेक्नोसर्व के एक कार्यकर्ता विशाल के अनुसार, महिलाओं ने जब एक बार इसकी जैविक प्रकृति को समझना प्रारम्भ कर लिया तब वे इसके उपयोग हेतु उत्सुक हो उठी थीं। विशाल का कहना है, ‘‘पहले, बहुत से किसानों की यह शिकायत रहती थी कि उन्हें अपनी फसलों के लिए उर्वरक और कीटनाशक नहीं मिल पा रही है। जब हमने उनके साथ जीवामृत तैयार करने हेतु प्रशिक्षण देने की अपनी योजना के बारे में बताया, तो पहले वे इसके प्रभावों के बारे में सशंकित थीं। लेकिन जब उन्होंने प्रशिक्षण में सहभागिता निभाई और अपनी फसलों पर इस मिश्रण का उपयोग करना प्रारम्भ कर दिया, तब उन्हें महसूस हुआ कि कुछ जैविक बनाने में आसान, विशेषकर सस्ता होने के साथ प्रभावी भी हो सकते हैं।’’

कोविड–19 के दौरान प्रभाव

वर्तमान महामारी ने इस पहल पर एक नया दृष्टिकोण प्रदान किया है। कोविड–19 और पूरे देश में लगाये गये लॉकडाउन के फलस्वरूप तुरन्त दिखाई देने की तुलना में अधिक अप्रत्यक्ष परिणाम हुए। थोक कृषि मण्डियों के बन्द हो जाने से पडेरू आदिवासियों की न केवल आजीविका का नुकसान हुआ, वरन् आपूर्ति श्रृंखला के बाधित हो जाने और आवागमन पर रोक लगने के कारण उन्हें सब्जी जैसी मूलभूत आवश्यकता की वस्तुओं से भी वंचित होना पड़ रहा था। तब गृहवाटिका और आसानी से उपलब्ध होने वाले जैव उर्वरकों का महत्व स्पष्ट हो गया। ऐसे समय में जब गाँव वालों को मूलभूत वस्तुओं जैसे– सब्जी आदि खरीदने में बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ रहा था, उस समय पडेरू की आदिवासी महिलाएं आत्मनिर्भर बन कर उभरीं। उन्होंने न केवल अपने परिवार की सहायता की, वरन् अपने घर के पिछवाड़े सब्ज़ियां उगाकर अन्य गांव वालों की भी सहायता की। मंगम्मा कहती हैं, ''मैं सामान्यतः एक बार में आवश्यकता से अधिक सब्ज़ियां तोड़ती हूं ताकि मैं गाँव में इसे अन्य लोगों को बाँट सकूं। लॉकडाउन के दौरान, प्रतिबन्धों के चलते तथा गाँव से बाजार की दूरी अधिक होने के कारण, हम जब तक वहाँ पहुँचते, तब तक वहाँ भी बहुत कुछ बेचने के लिए नहीं रह जाता था।'' उसके बाद से मंगम्मा की जैविक गृहवाटिका को देखकर बहुत सी महिलाएं अपनी स्वयं की गृहवाटिका बनाने के लिए उत्साहित हुई हैं। ''लोग देखते हैं कि मेरी सब्ज़ियां किस प्रकार बढ़ रही हैं व स्वस्थ हैं और मैं उनसे कह सकती हूं कि यह सब जीवाम्रुत के कारण हो रहा है। जब लॉकडाउन के दौरान हम कृषिगत निवेश नहीं खरीद पा रहे थे, जीवामृत न केवल आसानी से उपलब्ध होने वाला विकल्प था, वरन् यह उर्वरक एवं कीटनाशक के रूप में बेहद प्रभावी भी था।''

आगे रास्ते और हैं

पूरे कार्यक्रम के दौरान, 32 आदिवासी गाँवों से कुल 708 आदिवासी महिला किसानों को जीवामृत बनाने पर प्रशिक्षित किया गया। जैव उर्वरक का उपयोग करने वाली लगभग सभी महिलाओं ने अपनी उपज में सकारात्मक परिणाम दिखने की बात की। अभ्यास से टीम को यह पता चला कि कुछ प्रारम्भिक सहयोग और प्रशिक्षण के साथ, कम संसाधन वाले लोगों के बीच भी खेती के कृषि पारिस्थितिकी तरीकों को विकसित किया जा सकता है। हालाँकि, जीवामृत को तैयार करना खेती के हरित स्वरूप की दिशा में एक छोटा सा कदम हो सकता है, लेकिन इसे विशेषकर फार्मर प्रोड्यूसर संगठनों के माध्यम से अधिकाधिक किसानों तक विस्तारित करने की भरपूर संभावना है, साथ ही अत्यधिक संसाधनों तक किसानों की पहुँच को भी सुनिश्चित किया जा सकता है।

सामुदायिक सन्दर्भ व्यक्तियों का महिला किसानों के साथ नियमित सम्पर्क व जुड़ाव भी इस पहल की सफलता का एक मुख्य कारण था। चूँकि सामुदायिक सन्दर्भ व्यक्ति

जीवाम्रुत बनाना

उसी समुदाय से होते थे अथवा आस–पास के गाँवों से ही आते थे, इसलिए वे एक अधिक स्थाई और समुदाय आधारित मॉडल का नेतृत्व करने में सहायक होते थे। जब टेक्नोसर्व कार्यकर्ता पहल को फैसिलिटेट कर रहे थे, तब सामुदायिक सन्दर्भ व्यक्तियों की ही यह जिम्मेदारी थी कि वे महिला किसानों द्वारा अभ्यासों को प्रभावी ढंग से अपनाना सुनिश्चित करें। और एक प्रमुख सीख यह भी मिली कि– विशेषकर कम जनशक्ति होने वाले केसों में जमीनी स्तर पर पहलों / हस्तक्षेपों की अगुवाई करने वाले लोगों की पहचान करना है।

पडेरू के क्षेत्र में जैव उर्वरक बनाने एवं प्रयोग करने की सफलता के साथ, अब टेक्नोसर्व इस मॉडल को न केवल इस कार्यक्रम के अन्तर्गत अन्य क्षेत्रों में दुहराने की योजना बना रहा है, वरन् पूरे देश में कई कार्यक्रमों में इसका क्रियान्वयन किया जा रहा है।

सन्दर्भ

लक्ष्मैया ए, आन्ध्र प्रदेश के खम्मन जिले के आईटीडीए परियोजना क्षेत्रों में आदिवासी जनसंख्या का पोषण एवं आहार स्थिति, 2007,जर्नल ऑफ ह्यूमन इकोलॉजी

मार्डर इन्टेलीजेन्स, **आर्गेनिक फूड एण्ड बीवरेज मार्केज–ग्रोथ, ट्रेण्ड्स एण्ड फोरकास्ट्स (2020–2025)** 2020

▪

टेक्नोसर्व
बी 1, 201, सेण्टर प्वाइन्ट 243 ए, एन.एम. जोशी मार्ग
मुम्बई, महाराष्ट्र– 400013

Bio-input for agroecology
LEISA INDIA, Vol. 23, No.1, March 2021

Issues and Themes of LEISA INDIA Published in English 2008-2021

V.10, No. 1, 2008 - Towards Fairer Trade
V.10. No. 2, 2008 - Living soils
V.10, No. 3, 2008 - Farming and Social Inclusion
V.10, No. 4, 2008 - Dealing with Climate Change

V.11, No. 1, 2009 - Farming Diversity
V.11, No. 2, 2009 - Farmers as Entrepreneurs
V.11, No. 3, 2009 - Women and Food Sovereignty
V.11, No. 4, 2009 - Scaling up and sustaining the gains

V.12, No.1, 2010 - Livestock for sustainable livelihoods
V.12, No.2, 2010 - Finance for farming
V.12, No.3, 2010 - Managing water for sustainable farming

V.13, No.1, 2011 - Youth in farming
V.13, No.2, 2011 - Trees and farming
V.13, No.3, 2011 - Regional Food System
V.13, No.4, 2011 - Securing Land Rights

V.14, No.1, 2012 - Insects as Allies
V.14, No.2, 2012 - Greening the Economy
V.14, No.3, 2012- Farmer Organisations
V. 14, No.4, 2012- Combating Desertification

V. 15, No.1, 2013- SRI: A scaling up success
V. 15, No.2, 2013- Farmers and market
V. 15, No.3, 2013- Education for change
V. 15, No.4, 2013- Strengthening family farming

V. 16, No. 1, 2014- Cultivating farm biodiversity
V. 16, No. 2, 2014- Family farmers breaking out of poverty
V. 16, No. 3, 2014- Family farmers and sustainable landscapes
V. 16, No. 4, 2014- Family farming and nutrition

V. 17, No. 1, 2015- Soils for life
V. 17, No. 2, 2015- Rural-urban linkages
V. 17, No. 3, 2015- Water-lifeline for livelihoods
V. 17, No. 4, 2015- Women forging change

V. 18, No. 1, 2016- Co-creation to knowledge
V. 18, No. 2, 2016- Valuing underutilised crops
V. 18, No. 3, 2016- Agroecology-Measurable and sustainable
V. 18, No. 4, 2016- Stakeholders in agroecology

V. 19, No. 1, 2017- Food Sovereignty
V. 19, No. 2, 2017- Climate Change and Ecological appraches
V. 19, No. 3, 2017- Ecological Livestock
V. 19, No. 4, 2017- Millet Farming Systems

V. 20, No. 1, 2018- Agroecological Value Chains
V. 20, No. 2, 2018- Biological Crop Management
V. 20, No. 3, 2018- Small Holders Farm Enterprises
V. 20, No. 4, 2018- Agroecological Innovations
Special Issue April 2018- Agroecology- A path towards SDGs

V. 21, No. 1, 2019- Sustainable Aquaculture
V. 21, No. 2, 2019- Recycling resources in agro ecological farms
V. 21, No. 3, 2019- Agroecology- The future of farming
V. 21, No. 4, 2019- Save the planet

V. 22, No. 1, 2020- Special edition- Celebrating 20 years of knowledge on agroecology
V. 22, No. 2, 2020- Digital Agriculture
V. 22, No. 3, 2020- Small farmers and safe vegetable cultivation
V. 22, No. 4, 2020- Agroecology and going local

V. 23, No. 1, 2021- Bio-inputs for agroecology
V. 23, No. 2, 2021- Value addition
V. 23, No. 3, 2021- Healthy Horticulture

बेहतर प्राप्ति के लिए मूल्य संवर्धन

अयगरी रामलाल, धन्धापानी राजू, मधुलिका सिंह, अजय कुमार एवं अम्बिका राजेन्द्रन

छोटे और सीमान्त किसानों द्वारा अपनी खेती सम्बन्धी चुनौतियों से सफलतापूर्वक निपटने में सहयोग देने की फार्मर प्रोड्यूसर संगठनों के पास विशाल क्षमता है। मूल्य संवर्धन में इन संगठनों का क्षमता वर्धन करने से बेहतर गुणवत्ता वाले उत्पाद मिलेंगे, उनकी मोल–भाव करने की क्षमता में सुधार होगा, अतिरिक्त रोजगार के अवसर उपलब्ध होंगे और बेहतर प्राप्ति होगी।

भारत में बहुसंख्य आबादी सीमान्त एवं लघु किसानों की है। किसान मुख्य रूप से फसल बर्बाद हो जाने, मानसून की अनिश्चितता, जानकारियों एवं मार्गदर्शन तक पहुँच न होना, ऋणग्रस्तता, कार्यशील पूँजी का अभाव आदि चुनौतियों के कारण काफी नाजुक स्थिति में होते हैं। संगठित न होने के कारण, वे लगातार निवेशों तक पहुँच नहीं बना पाते हैं साथ ही लाभ दिलाने वाले बाजारों को उन्नत बनाने की क्षमता भी नहीं होती है।

फार्मर प्रोड्यूसर संगठन एवं सहकारी समितियां जैसे छोटे किसान समूह कुछ प्रमुख उत्पादकों जैसे– किसान, मत्स्य पालकों, दुग्धउत्पादकों, बुनकरों एवं अन्यों द्वारा गठित कानूनी निकाय हैं। वह एक उत्पादक कम्पनी अथवा एक सहकारी समिति हो सकती है, जो सदस्यों के बीच फायदा / लाभ को साझा करने में सक्षम होता है। अपने स्वयं के संगठन के माध्यम से उत्पादकों की बेहतर आय सुनिश्चित करने में सक्षम बनाना कुछ उत्पादक संगठनों का प्रमुख लक्ष्य होता है। वे यह उम्मीद करते हैं कि इससे उनकी आमदनी में वृद्धि होगी, लेन–देन की लागत सहित बाजार से खरीदे जाने वाले निवेशों पर उनकी लागत घटेगी, रोजगार के लिए अवसरों का निर्माण होगा, प्रसंस्करण, वितरण एवं विपणन सहित मूल्य संवर्धन में उन्हें शामिल किया जायेगा, मोल–भाव करने की उनकी क्षमता में वृद्धि होगी और औपचारिक ऋण प्रदान करने तक उनकी पहुँच बढ़ेगी। सदस्यों का विश्वास प्राप्त करने के सन्दर्भ में इन फार्मर प्रोड्यूसर संगठनों को प्रतिदिन विभिन्न प्रकार के मुद्दों और चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। दूसरी तरफ सदस्यों को भी अपने ढाँचे और एक सदस्य के रूप में फार्मर प्रोड्यूसर संगठन के चयन को लेकर बहुत स्पष्टता नहीं होती है। वर्तमान में, मुख्य धारा में शामिल एक महत्वपूर्ण संगठन ने सहयोग का प्रस्ताव दिया और इसी क्रम में नाबार्ड द्वारा प्रोड्यूसर संगठनों को वित्तीय सहयोग के साथ–साथ तकनीकी और प्रबन्धकीय सहयोग के लिए सहायता प्रदान की जा रही है। बाक्स 1 में श्री बालाजी फार्मर प्रोड्यूसर संगठन को एक उदाहरण के तौर पर दिया जा रहा है –

कुछ सफल कहानियां

कटाई के बाद नुकसान को कम करने के साथ ही बेहतर आय प्राप्त करने के लिए मूल्य संवर्धन बहुत से फार्मर प्रोड्यूसर संगठनों की एक जाँची–परखी रणनीति रही है। भिन्न–भिन्न सन्दर्भों से ऐसे प्रयासों के बहुत से उदाहरण हैं। ये सन्दर्भ या तो स्थानीय विशिष्ट उत्पादों के उत्पादन से जुड़े होते हैं या फिर संगठन द्वारा किये गये प्रयासों को बताते हुए उन्हें व्यापकता प्रदान करते हैं ताकि संगठित होने का महत्व प्रदर्शित हो सके। सबसे अधिक महत्वपूर्ण तो यह है कि प्रसंस्करण और मूल्य संवर्धन के लिए जरूरी आवश्यक दक्षता पर क्षमतावर्धन करने के माध्यम से सदस्यों का क्षमतावर्धन भी किया गया।

विविध सन्दर्भों से लिए गये कुछ उल्लेखनीय उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं–

मेघालय में केला में मूल्य संवर्धन

मेघालय का बोलकिंग्रे महिला कमोडिटी इण्टरेस्ट समूह केला की खेती करता है। केला बहुत से विटामिनों एवं मिनरलों से समृद्ध होने के साथ एक औद्यानिक फसल भी है, जो मेघालय की गारो पहाड़ियों में बहुत अधिक उगाई जाती है। यह समूह केला की स्थानीय प्रजाति ''बिटागुरी'' (अथवा नेन्द्रन) उगाता है। केले की इस विशिष्ट प्रजाति की मुख्य खासियत यह है कि इसके फल का आकार मध्यम होता है और इससे चिप्स बनाया जाता है। अब, जिला वाणिज्य एवं उद्योग केन्द्र के सहयोग से, वे केला का चिप्स बनाने के साथ ही अचार आदि बनाने की तकनीक सीख रही हैं। परिणामतः उनकी साप्ताहिक और मासिक आय में वृद्धि हुई है।

मछलियों एवं इसके उत्पादों में मूल्य संवर्धनः

रेणुगादेवी आत्मा समूह ने मूल्य संवर्धन के साथ–साथ समूह दृष्टिकोण के माध्यम से अपनी खेती और आय के स्तर को बढ़ाने की कल्पना की। मूल्य संवर्धन और पोस्ट हार्वेस्ट तकनीक, दोनों में अपनी क्षमता बढ़ाने के क्रम में,

बाक्स 1 : श्री बालाजी फार्मर प्रोड्यूसर कम्पनी

श्री बालाजी फार्मर प्रोड्यूसर कम्पनी लिमिटेड एक फार्मर प्रोड्यूसर संगठन है, जिसका प्रारम्भ बिहार के गया जिले के मुरेरा गाँव में वर्ष 2019 में हुआ। प्रारम्भ में यह फार्मर प्रोड्यूसर संगठन एक आत्मा समूह के तौर पर था और औपचारिक रूप से इसे ''श्री बालाजी कृषि उद्यमी समूह'' के नाम से जानते हैं। शुरूआत में इसमें मात्र 30 किसान सदस्य के रूप में थे। बाद में, इस फार्मर प्रोड्यूसर संगठन ने रू0 3,20,000.00 की पूंजी के साथ एक कस्टम हायरिंग सेण्टर स्थापित किया। इसके बाद, उन्होंने रू0 10 लाख का निवेश करके विभिन्न कृषिगत निवेशों को खरीदना प्रारम्भ कर दिया और इसे क्रियाशील बनाया। प्रथम वर्ष के दौरान, उन्होंने रू0 4 लाख का लाभ प्राप्त किया। फार्मर प्रोड्यूसर संगठन के सामने सबसे बड़ी चुनौती सदस्यता का विस्तार करना था। कृषि विज्ञान केन्द्र एवं आत्मा समूहों के लोगों ने इसमें बड़ी सहायता की। वर्तमान में, वे बहुत से नवीन पहल कर रहे हैं, जिसमें लेमनग्रास, जी–9 केला, पपीता की रेड लेडी प्रजाति एवं मछली पालन शामिल हैं। इसके अलावा वे बंगाल और पंजाब के बाजारों में बेहतर मूल्य पर बेचने के लिए 1121 एवं 1509 प्रजातियों की बासमती चावल बोने का प्रयास भी कर रहे हैं।

समूह ने मछली प्रसंस्करण और मूल्य सवंर्धित उत्पादों जैसे– सूखे उत्पाद, बेक्ड सामग्री एवं मछली के भण्डारण करने योग्य उत्पादों के उत्पादन की संभावना को बढ़ाने के साथ ही विपणन रणनीति में वृद्धि करने के उद्देश्य से तमिलनाडु स्थित डॉ0 जयललिता मत्स्य विश्वविद्यालय के सहयोग से मछली प्रसंस्करण तकनीकों पर एक प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया। समूह ने अभी तक मूल्य संवर्धन नहीं किया है।

आम का मूल्य संवर्धन

कृषि विज्ञान केन्द्र, उन्नाव और उत्तर प्रदेश के जिला कृषि विभाग ने श्रीमती तारावती देवी को उनकी कृषि खेती को बेहतर तरीके से बनाये रखने के लिए तकनीकी मार्गदर्शन और सहायता प्रदान करके सहयोग किया। बाद में वह ''आम के फल का मूल्य सवंर्धन के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं के रोजगार'' पर परियोजना का हिस्सा बनीं। इसके बाद उसने अपने खेत में लगे आम में मूल्य संवर्धन कार्य प्रारम्भ किया और अचार और पाउडर तैयार कर अपनी कमाई में वृद्धि की।

निष्कर्ष

फार्मर प्रोड्यूसर संगठनों के पास लघु एवं सीमान्त किसानों की चुनौतियों से सफलतापूर्वक निपटने की अपार संभावना है। वे मोल–भाव करने की क्षमता बढ़ाने तथा निवेशों तक बेहतर व सरल पहुँच सुनिश्चित करने में सक्षम बनाना आदि रूपों में किसानों को बहुत से लाभ दिलाते हैं। फिर भी, विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से इन संगठनों का क्षमता निर्माण किया जाना है। इससे उन्हें बेहतर गुणवत्तापूर्ण उत्पाद प्राप्त करने, पोस्ट–हार्वेस्ट तकनीकों को कम करने, अधिक रोजगार अवसरों को उपार्जन करने और मूल्य संवर्धन के माध्यम से बेहतर आय प्राप्त करने में सहायता मिलेगी। वर्तमान में, इन फार्मर प्रोड्यूसर संगठनों को नाबार्ड एवं लघु किसान कृषि व्यापार कन्सोर्टियम, कृषि विज्ञान केन्द्रों एवं आत्मा के साथ बहुत सी स्वैच्छिक संगठनों द्वारा सहयोग प्रदान किया जा रहा है।

सन्दर्भ

1. बिक्किना एन., तुरागा, आर.एम.आर. व भामोरिया वी, संगठित किसान के तौर पर फार्मर प्रोड्यूसर संगठन : भारत से एक केस स्टडी, 2018, डेवलपमेण्ट पॉलिसी रिव्यू, 36 (6), 669–687

2. महिला किसानों की प्रेरणादायक कहानियां, 2020, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, कृषि, सहकारी एवं किसान कल्याण विभाग, https://agricoop.nic.in/sites/devault/files/Success%20Story%20_%208.pdf

3. नाबार्ड, फार्मर प्रोड्यूसरसंगठन,https://www.nabard.org/ demo/auth/writereaddata/File/FARMER% 20PRODUCER% 20ORGANISATIONS. pdf

■

अयगरी रामलाल एवं अम्बिका राजेन्द्रन
जेनेटिक्स विभाग, आई.सी.आर.– भारतीय कृषिगत
शोध संस्थान, पूसा कैम्पस, दिल्ली– 110012
ईमेल : rambikarajendran@gmail.com

धन्धापानी राजू
प्लाण्ट पैथालॉजी विभाग,
आई.सी.आर.– भारतीय कृषिगत
शोध संस्थान, पूसा कैम्पस, दिल्ली– 110012

मधुलिका सिंह एवं अजय कुमार
सी रियल सिस्टम्स फॉर साउथ एशिया
(सीएसआईएसए–सीआईएमएमवाईटी),
बिहार

Value addition
LEISA INDIA, Vol.23, No.2, June 2021

बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों हेतु सब्ज़ियों का जलवायु अनुकूलित बीज उत्पादन : अपना खेती, अपना बीज

अर्चना श्रीवास्तव

पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार के बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों में सब्ज़ियों की खेती करने वाले किसानों के सामने सबसे बड़ी समस्या समय से गुणवत्तापूर्ण बीजों की उपलब्धता है। बाजार में उपलब्ध हाईब्रिड बीजों को किसान अगले वर्ष के संरक्षित नहीं कर सकता और परम्परागत बीज लुप्तप्राय होते जा रहे हैं। इस समस्या से निपटने के लिए भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय के सीड डिवीजन से सहायता प्राप्त कोर सपोर्ट परियोजनान्तर्गत गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप के किसानों ने परम्परागत बीजों को तैयार कर संरक्षित करते हुए अपना खेत एवं अपना बीज की दिशा में एक पहल प्रारम्भ किया है।

गोरखपुर एन्वायरन्मेण्टल एक्शन ग्रुप द्वारा संचालित विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार (सीड डिवीजन) के कोर सपोर्ट परियोजना के अन्तर्गत विकास खण्ड– जंगल कौड़िया, जनपद– गोरखपुर, उत्तर प्रदेश एवं नौतन प्रखण्ड, जिला– पश्चिमी चम्पारण, बिहार में परियोजना आच्छादित कुछ क्षेत्रों में प्रत्येक वर्ष बाढ़ एवं जल–जमाव की समस्या बनी रहती है। ऐसे क्षेत्रों में किसानों की खेती / फसल का नुकसान होता है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय होगा कि इन क्षेत्रों में किसान सब्ज़ियों की खेती अधिक मात्रा में करते हैं और प्रायः सब्ज़ियों की खेती बाढ़ एवं जल–जमाव के प्रति संवेदनशील होती है। वहीं दूसरी तरफ यह भी एक समस्या है कि बाजार में गुणवत्तापूर्ण सब्ज़ियों के बाढ़ एवं जल–जमाव रोधी बीजों की कमी है।

पहल

ऐसी स्थिति में इन क्षेत्रों के किसानों ने गोरखपुर एन्वायरन्मेण्टल एक्शन ग्रुप एवं विज्ञान एवं प्रौद्यागिकी विभाग के तकनीकी सहयोग से पारम्परिक बीज उत्पादन प्रक्रिया अपनाने में रूचि प्रदर्शित की। पिछले तीन वर्षों से इन क्षेत्रों के किसानों द्वारा जलवायु अनुकूलित बीजों जैसे– चौलाई, करेला, भिण्डी, नेनुआ आदि का उत्पादन किया जा रहा है। इसी क्रम में पिछले वर्ष उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जनपद के पचगांवा गाँव के किसान उमेश एवं बिहार, पश्चिमी चम्पारण के गाँव जगदीशपुर देगौना के किसान सुरेश भगत ने ऐसी भिण्डी का बीज तैयार किया, जिसकी खेती जल–जमाव के दौरान 1–2 फुट पानी एक

किसान सुरेश भगत द्वारा भिण्डी का बीज उत्पादन

से डेढ़ माह तक लगे रहने वाले खेतों में भी सफलतापूर्वक की जा सकती है।इसी प्रकार जंगल कौड़िया, जिन्दापुर के किसान सुग्रीव ने पूरे वर्ष चौलाई की खेती करने वाले बीजों को तैयार किया है।

बीजों के चयन एवं उत्पादन के परीक्षण की प्रक्रिया

रिजीलियण्ट सब्ज़ियों के बीजों को प्राप्त करने के लिए सबसे पहले उनकी प्रकृति को ध्यान में रखते हुए (बाढ़ एवं जल–जमाव को सह सकने वाली सब्ज़ियां) सब्ज़ियों के बीजों का चयन करके अलग–अलग जलवायुविक परिस्थितियों में और अलग–अलग प्रकार की मिट्टी पर इनकी खेती करते हैं और बेहतर परिणाम प्राप्त होने पर पुनः दूसरे सीजन में इनका परीक्षण किया जाता है। इस प्रकार ट्रायल की प्रक्रिया से गुजरने के बाद बीजों को उनकी विशिष्ट विशेषता के आधार पर वर्गीकृत कर पैकेजिंग की जाती है।

प्रसार एवं विस्तार

अधिक किसानों तक इन बीजों की पहुँच सुनिश्चित करने के उद्‌देश्यों परियोजना के अन्दर स्थापित कृषि सेवा केन्द्रों द्वारा इन बीजों को शोधित करके 100 एवं 50 ग्राम के पैकेट में पैकिंग कर आस–पास के किसानों को एवं बाजार में बिक्री हेतु उपलब्ध कराया जाता है। इसके अतिरिक्त स्थानीय स्तर पर एवं अन्य जनपदों में लगने वाले किसान मेला, प्रदर्शनी एवं संगोष्ठियों में भी इसका प्रदर्शन किया जाता है।

किसानों द्वारा किये गये सफल प्रयास

अ. **भिण्डी का बीज उत्पादन** : इन दोनों किसानों द्वारा वर्षाकाल में होने वाली भिण्डी का चयन करके पिछले 2 वर्ष से अलग–अलग जलवायुविक परिस्थितियों एवं अलग–अलग प्रकार की भूमि पर डी0एस0टी0 कोर सपोर्ट परियोजना के सहयोग से ट्रायल किया गया और आशातीत परिणाम प्राप्त होने के बाद प्राप्त बीजों को किसानों द्वारा 100 ग्राम के पैकेट में तैयार किया गया। इस वर्ष इस बीज को अधिक मात्रा में पैदा करने के लिए 10 किसानों का चयन किया गया और उन्हें बीज की उपलब्धता सुनिश्चित कराई गयी। इन बीजों से तैयार भिण्डी के पौध की लम्बाई 5–6 फुट होती है और फलों की लम्बाई 6–8 सेमी0 तक होती है। इस फसल को वर्षा ऋतु में लेने के बाद उसे कटिंग कर देने पर रबी के मौसम में भी भिण्डी की खेती आसानी से की जा सकती है।

पैक किया हुआ चौलाई बीज

ब. **चौलाई का बीज उत्पादन** : बीज उत्पादन हेतु चौलाई की बुवाई जनवरी के अन्तिम सप्ताह में करते हैं। बुवाई के एक माह के अन्दर ही पहली कटाई कर बिक्री कर दी जाती है। माह फरवरी से अप्रैल के बीच तीन से चार कटाई कर साग के रूप में बेच देते हैं। अप्रैल के अन्तिम सप्ताह में जमीन से पाँच इंच ऊपर से कटाई करते हैं। पुनः उसे उखाड़ कर खेत में लाइन से लाइन 10 इंच एवं पौधे से पौधा 10 इंच की दूरी पर रोपाई कर खेत में हल्की सिंचाई कर देते हैं। इस प्रकार से की गयी रोपाई के 45 दिन बाद बीज बन कर तैयार हो जाता है। कटाई करने के बाद अच्छी तरह सुखा कर पौधों को पीट कर बीज निकाल लिया जाता है। इस बीज की बुवाई तीनों मौसमों में की जा सकती है।

निष्कर्ष

इस प्रकार तैयार परम्परागत बीजों की सफलता से उत्साहित होकर परियोजना से जुड़े किसान नेनुआ, मटर, सरसों आदि के बीज भी तैयार कर रहे हैं जो जलवायु जनित परिस्थितियों के प्रति सहनशील तथा किसानों को लाभ देने वाला है।

▪

अर्चना श्रीवास्तव
डी०एस०टी० कोर सपोर्ट परियोजना
गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप
गोरखपुर

लीची प्रसस्करण

एक आशाप्रद मूल्य संवर्धन

अलेमवती पोंगनर, एस.के. पूरबे, विनोद कुमार, विशाल नाथ, एस.डी. पाण्डेय एवं अभय कुमार

फलों का प्रसंस्करण अक्सर उच्च निवेश से जुड़ा होता है। यही कारण है कि छोटे किसान फलों के मूल्य संवर्धन की दिशा में अग्रसर नहीं होते हैं। अपनी सरल तकनीक और प्रारम्भिक सहयोग देकर आईसीएआर ने बिहार के लीची की खेती करने वाले किसानों को उनके बड़े सपने पूरे करने में सहयोग प्रदान किया है।

लीची के थोक अथवा फुटकर किसी भी तरह के व्यापारी से बात करें तो यह आवश्यक नहीं कि वह लीची उगाने वाला किसान भी हो। बिहार, जो लीची का गढ़ है, वहाँ पर लीची की खेती करने वाले लगभग सभी किसान फसल कटाई से पूर्व ही अपनी फसल ठेकेदार को बेच देते हैं। वही आकर फलों की तुड़ाई करते हैं, बाजार में ले जाते हैं और मुनाफा कमाते हैं। हालाँकि, कुछ लोग यह भी कह सकते हैं कि किसान अपने उत्पादों को बेचने की चिन्ता से मुक्त हो जाते हैं। लेकिन यह एक सोचने का विषय है कि प्रत्येक लीची उत्पादक किसान अपनी फसल को फल आने से पूर्व ही बिचौलियों को क्यों दे देता है।

कई अन्य फलों के विपरीत, लीची की तुड़ाई आम तौर पर एक ही बार होती है। पूरे बाग से एक ही बार में लीची तोड़ ली जाती है। लीची की तुड़ाई की अवधि कम होती है, जो अधिकतम 15–20 दिनों तक चलती है। तब फलों के बहुत तेजी से पकने अथवा सड़ने की समस्या होती है। अर्थात् फलों का रंग बहुत तेजी से लाल से भूरा होने लगता है। सामान्य पर्यावरणीय स्थितियों में तोड़ी गयी लीची का रंग 24–48 घण्टे के अन्दर भूरा होने लगता है। एक वस्तु के रूप में लीची की खरीददारी बहुत तेज होती है, इसलिए कोई भूरे रंग की लीची खरीदना नहीं चाहता है। स्थानीय स्तर पर, बाजार में लीची की भरमार हो जाती है और बहुधा इसे बड़ी मुश्किल से बेचा जाता है। फल जल्दी खराब होने तथा पोस्ट हार्वेस्ट की कोई उचित तकनीक न होने के कारण इसे दूर तक भेजना कठिन होता है। अन्ततः उच्च लागत और कम आमदनी होने के बावजूद अधिकाँश लीची उत्पादक फल आने से पूर्व ही ठेकेदारों को बेच देना अधिक सरल विकल्प समझते हैं।

प्रसंस्करण के माध्यम से मूल्य संवर्धन : आई.सी.ए.आर– लीची पर राष्ट्रीय शोध संस्थान की पहल

पोस्ट हार्वेस्ट के बाद फलों के होने वाले नुकसान को कम करने तथा फलदार फसलों का मूल्य संवर्धन करने हेतु प्रसंस्करण एक बेहतर माध्यम है। आई.सी.ए.आर – लीची पर राष्ट्रीय शोध संस्थान, मुजफ्फरपुर, बिहार ने लीची से तैयार पेय पदार्थों के प्रसंस्करण और संरक्षण के लिए तकनीकों को विकसित व मानकीकृत किया है।

लीची स्कवैश तैयार करती एस.जे.एम.के पी.सी.एल. की चन्दा कुमारी

2014–2017 के बीच, प्रशिक्षण कार्यक्रमों, किसान मेलों, प्रदर्शनियों आदि के दौरान तकनीक के सकारात्मक पहलुओं से लोगों को परिचित कराया गया। केन्द्र ने प्रयोग के तौर पर पायलट के रूप में पेय पदार्थों का निर्माण किया और व्यापार के अवसर के रूप में इस तकनीक की सफलता को दिखाने के लिए बाजार में बेचा भी। उत्पादकों की रूचि को भांपते हुए, केन्द्र ने लीची से पेय पदार्थ बनाने हेतु सूक्ष्म प्रसंस्करण पर एक उद्यमिता विकास कार्यक्रम का प्रारम्भ किया, जहां पंजीकृत प्रतिभागियों को पेय पदार्थ संरक्षण, खाद्य सुरक्षा विनियमन एवं लाइसेंस बनाना, भण्डारण और विपणन पर जागरूक बनाया गया। एक बार

जब प्रशिक्षु यह सीख गये कि पेय पदार्थों को बहुत न्यूनतम निवेश के साथ तैयार करना एक रसोई के काम जैसा है, तो फिर उन्होंने वर्ष 2018 के अन्त में इस काम को करना प्रारम्भ कर दिया।

कुछ मशाल वाहक

मुजफ्फरपुर के कुरहनी प्रखण्ड के 55 वर्षीय किसान राम सरोवर अपने बगीचे में लगे आम के 10 पेड़ों से अपनी परिवार की जरूरतों को पूरा करने के लिए बहुत मुश्किल से आय अर्जन कर पाते हैं। यह सोचते हुए कि प्रसंस्करण से शायद उनका परिवार इन मुश्किलों से बाहर निकल सके, उन्होंने लीची पर राष्ट्रीय शोध संस्थान से फल प्रसंस्करण की तकनीक सीखी। शुरूआत में उन्होंने आम का स्कवैश एवं तुरन्त खाने योग्य उत्पादों को बनाया। बाद में, उन्होंने आस–पास के लीची उत्पादन करने वाले किसानों से लीची लेकर उसका गूदा बनाना एवं बेचना प्रारम्भ कर दिया। देश के अन्य स्थानों की तरह ही, युवा वर्ग खेतों में जुताई करने और मेहनत करने को व्यवसाय नहीं मानता और न ही उसे अपनाना चाहता है और राम सरोवर का बेटा भी इससे भिन्न नहीं था। राम सरोवर अपने 24 वर्षीय बेटे भारत भूषण के बारे में बताते हैं, ''मैं अपने शिक्षित और युवा बेरोजगार बेटे को लेकर बहुत चिन्तित था, जो कृषि को एक व्यवसाय के तौर पर अपनाने का इच्छुक नहीं था। लेकिन, एक बार जब हमारा लीची प्रसंस्करण का व्यापार प्रारम्भ हुआ और लाभ आने लगा तब वह हमारे साथ पूर्णकालिक रूप से जुड़ गया।'' आज वे गर्व से कहते हैं कि उनके बेटे की पहचान लीची प्रसंस्करणकर्ता एवं विपणनकर्ता के रूप में है। वर्ष 2018 में, उन्होंने अपने लाभ की कमाई को फिर से अधिक क्षमता वाला पल्पर खरीदने में लगा दिया। आज, उनकी कम्पनी, राम सरोवर एग्रो फूड्स पूरे देश में खरीददारों को लीची का गूदा बेचती है। सरोवर लीची का स्क्वैश एवं अन्य खाद्य वस्तुएं बनाते हैं और खुदरा ग्राहकों, रेस्टोरेण्टों एवं ढाबों पर आपूर्ति करते हैं। तीन वर्ष के अन्दर, सरोवर पहले ऐसे प्रसंस्करणकर्ता बन गये हैं, जो आस–पास के लीची उत्पादकों के साथ उनके विकास एवं महत्वाकांक्षा को पूरा करने का स्रोत बन गये हैं।

अपने अनूठे स्वाद वाले गुणधर्म के कारण ही लीची फलों के बीच एक अलग छवि रखती है। बाजार में लीची से बने पेय पदार्थों के विविध उत्पाद, आइसक्रीम, मिठाईयां, घरेलू उत्पाद जैसे– अगरबत्ती, सौन्दर्य प्रसाधन जैसे लिपिस्टिक आदि से इसकी लोकप्रियता और ग्राहकों के बीच इसकी स्वीकार्यता का अन्दाजा आसानी से लगाया जा सकता है। समस्तीपुर के एक अन्य किसान 50 वर्षीय श्री अनोज कुमार राय यह स्वीकार करते हैं कि विविध उत्पादों के लिए लीची प्रसंस्करण एवं उच्च आय प्राप्त करने के लिए रास्ते तलाश करना हमारा बचपन का सपना था। अनोज कहते हैं, ''लीची की उपलब्धता बमुश्किल एक माह ही होती है। मैं लीची का प्रसंस्करण करना चाहता हूँ ताकि इसके स्वादिष्ट स्वाद एवं स्वास्थ्य लाभों को पूरे वर्ष उपभोक्ताओं को उपलब्ध करा सकूं।'' मई 2020 में, जब कोविड–19 अपने चरम पर था, उस समय लीची को बेचना बहुत समस्याप्रद एवं जोखिमपूर्ण था। उन्होंने इस संकट को अवसर में बदलने का निश्चय किया। वह कहते हैं, ''एक तरफ तो लीची जल्द खराब होने वाली फसल है, तो वहीं दूसरी तरफ पूरे देश भर में लगे प्रतिबन्ध ने हमारी

पूसा, समस्तीपुर में अपने खेत पर अपने लीची एवं आम के उत्पादों के साथ अनोज कुमार राय

तालिका : श्री मनोज कुमार राय द्वारा प्रसंस्करण के माध्यम से आय में वृद्धि

विपणन के प्रकार	ताजा विपणन	प्रस्करण	शुद्ध आय
समग्र उत्पाद को बिचौलियों को बेच देना (परम्परागत)	3000 किग्रा	0	रू0 40,000/-
उत्पाद के कुछ भाग का प्रसंस्करण (2020 के अनुभव)	2500 किग्रा	500 किग्रा	रू0 1,12,500/-
समग्र उत्पाद का प्रसंस्करण	0	3000 किग्रा	रू0 4,75,000/-

चिन्ताओं को और बढ़ा दिया था। मैंने निश्चय किया कि हार मानने और अपना नुकसान गिनने के बजाय, मुझे फलों का प्रसंस्करण और गुदा का संरक्षण करना चाहिए।'' लीची पर राष्ट्रीय शोध संस्थान के तकनीकी निर्देशन में श्री अनोज ने न केवल अपनी फसल को सुरक्षित किया, वरन् फल प्रसंस्करण के साथ अपनी विश्वासपूर्ण शुरूआत भी की। बिचौलियों के साथ सौदा कर उन्हें अपने 60 लीची के पेड़ों से मात्र रू0 40000.00 की आय होती थी। जबकि 2020 की गर्मियों में 10 वृक्षों से 500 किग्रा0 लीची की तुड़ाई कर उसे प्रसंस्कृत कर खाने के लिए तैयार पेय पदार्थों के रूप में बदल कर रू0 79200.00 की सकल आय प्राप्त की। लीची प्रसंस्करण की सफलता के साथ, उन्होंने इसी प्रक्रिया को ''मल्लिका'' आम के साथ दुहराया। आज उनके उत्पाद स्थानीय स्तर पर धड़ल्ले से बिक रहे हैं। श्री अनोज का कृषि–नवाचार के प्रति जज्बा प्रशंसनीय एवं उल्लेखनीय है और वह कठिन परिस्थितियों में सफलता का एक बेहतर उदाहरण हैं। उनकी सफलता को देखते हुए आस–पास के बहुत से किसान श्री अनोज के साथ जुड़े और पूसा फार्मर्स प्रोड्यूसर कम्पनी नाम से एफपीओ का गठन किया।

बिहार के मुजफ्फरपुर जिले के झपहा में समर्पण जीविका महिला किसान प्रोड्यूसर कम्पनी लिमिटेड नामक एक एफपीओ है, जो तकनीक एवं विपणन आधारित गतिविधियों के माध्यम से किसानों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति को उन्नत बनाने की दृष्टि से महिला किसानों के बीच काम कर रही है। इसने मार्च, 2020 में आईसीएआर–एनआरसीएल में उद्यमिता विकास कार्यक्रम में प्रतिभाग किया। आगामी लीची सीजन में मई–जून में इन लोगों द्वारा लगभग 20 टन लीची का गूदा प्रसंस्कृत किया गया था।

यद्यपि खाद्य प्रसंस्करण उद्योग के विशाल जगत में इस तरह की सफल कहानियां एक छोटा कदम लेकिन सर्वश्रेष्ठ निवाला माना जा सकता है, फिर भी परिवर्तन की बयार वास्तविक और प्रोत्साहित करने वाली है। फल प्रसंस्करण में छोटे एवं सीमान्त किसानों के बीच आशा एवं रूचि है और यह सही भी है। बिहार के शाही लीची को जीआई (भौगोलिक संकेत) के तौर पर पंजीकृत किया गया है, जो गुणवत्ता को सुनिश्चित करता है और विशिष्टता का श्रेय बिहार में इसके उत्पादन वाले क्षेत्र को दिया जाता है। इसके बाद एमओएफपीआई की पीएमएफएमई योजना के अन्तर्गत 'एक जिला एक उत्पाद' कार्यक्रम में मुजफ्फरपुर, पश्चिमी चम्पारण और सीतामढ़ी जिलों के लिए लीची का चयन किया गया। इन कारकों की वजह से लीची में प्रसंस्करण की वृद्धि के रास्तों को अत्यावश्यक प्रोत्साहन मिलने की उम्मीद है।

प्रभावित करने वाले कारक

राम सरोवर और अनोज राय जैसे और भी बहुत से लोगों को सफलता मिलने के पीछे कुछ उल्लेखनीय कारक हैं, जो निम्नवत् हैं –

अपने स्वयं की रसोई में प्रसंस्करण

छोटे और सीमान्त किसानों को उद्यमी बनाने और पहली बार प्रसंस्करण करने हेतु तभी तैयार किया जा सकता है, जब उन्हें यह विश्वास दिला दिया जाय कि उनकी स्वयं की रसोई में भी प्रसंस्करण कार्य किया जा सकता है। इसे प्राप्त करने के लिए, सूक्ष्म स्तरीय प्रसंस्करण तकनीकों पर प्रशिक्षण एवं क्षमता वर्धन महत्वपूर्ण हो जाता है अर्थात खाद्य प्रसंस्करण पर वैज्ञानिक तरीके से अनुभवों व प्रशिक्षणों को देना जिससे सीखने वाले उसे अपने घरों में दुहरा सकें। मुजफ्फरपुर से एक दूसरे प्रसंस्करणकर्ता अखिलेश के अनुसार, ''मेरे पास विभिन्न फलों वाला एक बगीचा है और साथ में एक बड़ा सपना भी है, लेकिन कुछ बड़ा करने से पहले मुझे कुछ बुनियादी चीजें जाननी आवश्यक होंगी। मुझे फल संरक्षण के मूलभूत सिद्धान्तों को जानना है तथा यह भी समझना है कि मैं अपने उत्पादों को बेचने में किस प्रकार सक्षम हो सकूं।''

संस्थागत सहयोग

छोटे व्यवसायों को प्रत्येक कदम पर सलाह देकर तथा तकनीकी कौशल एवं संरचनात्मक सुविधाएं प्रदान कर पहली बार प्रसंस्करण करने वाले लोगों को लम्बे समय तक संस्थागत सहयोग प्रदान किया जा सकता है। आईसीएआर, केवीके, कृषि विश्वविद्यालयों आदि सार्वजनिक संस्थानों में कृषि–व्यापार इनक्यूबेशन इकाईयां एवं तकनीकों का हस्तान्तरण जैसे अनुभाग खाद्य प्रसंस्करण सहित कृषि में छोटे व्यवसायों तथा स्टार्ट–अपों का ध्यान रखते हैं। आईसीएआर–एनआरसीएल में, उद्यमिता विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रशिक्षण के बाद प्रतिभागियों को सभी संभावित तकनीकी दिशा–निर्देशों के साथ उत्पाद विकास के लिए प्रयोगशाला उपकरणों तक पहुँच की सुविधा प्रदान की जाती है। नये प्रसंस्करण करने वाले लोगों को केन्द्र की तरफ से पोस्ट हार्वेस्ट कार्यशाला व प्रसंस्करण सुविधाएं

पैंकेजिंग के लिए फलों का गुच्छा ले जाते हुए कार्यकर्ता

किराये पर प्रदान की जाती है। इसके साथ ही नया स्टार्ट–अप शुरू करने वाले लोगों को अपने उत्पादों के विपणन तथा एफएसएसएआई लाइसेन्स सहित अन्य आवश्यक पंजीकरण के लिए भी सलाह दी जाती है। ये सभी प्रसंस्करण में असफल होने के जोखिम को कम करने के लिए किसानों को सहयोग देने के महत्व को दर्शाते हैं।

सपने बड़े, शुरूआत छोटी

सपने देखना एक बात है और उसे वास्तविकता में बदलना बिलकुल दूसरी बात है। खाद्य उद्योग में बहुत सी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का वर्चस्व है और प्रतिस्पर्धा में बने रहना तथा सफल होना आसान नहीं है। ऐसी स्थिति में उत्पादों की बाजार में स्वीकार्यता जानने के बाद ही बड़ा निवेश करना चाहिए। बिना यह जाने कि उत्पाद बिकेगा या नहीं, बड़ा निवेश करने से व्यवसायक को घाटा तथा भारी नुकसान का जोखिम होगा। जैसा कि अनोज कहते हैं, ''मेरी योजना छोटी शुरूआत करने और स्थानीय बाजार मांगों के अनुसार प्रक्रिया करने की है। पहले मैं अपने उत्पादों को लोकप्रिय बनाने और अपने विपणन क्षेत्र को विस्तारित करने के लिए प्रयास करूंगा। मेरी योजना कारोबार की वृद्धि के अनुसार ही विस्तार एवं निवेश करने की है।''

निष्कर्ष

लीची प्रसंस्करण में व्यवसाय करने के बहुत से विकल्प हैं। ताजी लीची के विपणन से जुड़े खतरों एवं जोखिमों को कम करने के लिए प्रसंस्करण एक महत्वपूर्ण उपकरण हो सकता है। फल प्रसंस्करण के माध्यम से उद्यम एवं व्यवसाय का विकास अन्य सम्बन्धित उद्योगों जैसे– पैकेजिंग, खाद्य सामग्री, जल शुद्धिकरण, लॉजिस्टिक एवं गोदाम, ई–कॉमर्स आदि को भी बढ़ावा दे सकता है। मुजफ्फरपुर एवं उसके आस–पास लीची के कुछ सूक्ष्म प्रसंस्करणकर्ता उभरे रहे हैं। पीएमएफएमई योजना के रूप में वर्तमान संस्थागत सहयोग के चलते प्रसंस्करण का भविष्य उज्जवल है। संरक्षण तकनीक को अपनाकर पूरे वर्ष भर उपलब्ध रहने वाली दूसरी मौसमी फलों एवं सब्ज़ियों का प्रसंस्करण लोगों को रोजगार दे सकता है।

अलेमवती पोंगनेर
वैज्ञानिक (फल विज्ञान)
आई.सी.ए.आर– लीची पर राष्ट्रीय शोध संस्थान
मुजफ्फरपुर, बिहार
ईमेल : alemwati@gmail.com

Value addition
LEISA INDIA, Vol. 23, No. 2, June 2021

भारत में पारम्परिक कृषि- पशु चारागाह प्रणाली के माध्यम से रास्ता बनाना

रितुजा मित्रा एवं साहिथ गोवर्धनम

पशु चारागाह/चराई और कृषि के बीच अर्न्तसम्बन्धों से हरित, पयार्वरणीय दृष्टि से स्थाई एवं वैश्विक अर्थव्यवस्था को परिवर्तित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की संभावना होती है। पूरे देश में पशु–चराई प्रणाली के बहुत से उदाहरणों के माध्यम से प्राकृतिक संसाधनों, स्थानीय जलवायु परिस्थितियों के प्रति अनुकूलन एवं मृदा उर्वरता बढ़ाने में पशुओं से तैयार खादों के कारण आर्थिक एवं पारिस्थितिक मूल्य निर्माण के प्रबन्धन के प्रति उनके ज्ञान पर समझ प्रदान करती है।

भरवाड़ की महिलाएं कपास के खेत की सफाई तथा झुण्ड पालने में व्यस्त हैं।

फोटो : रितुजा मित्रा

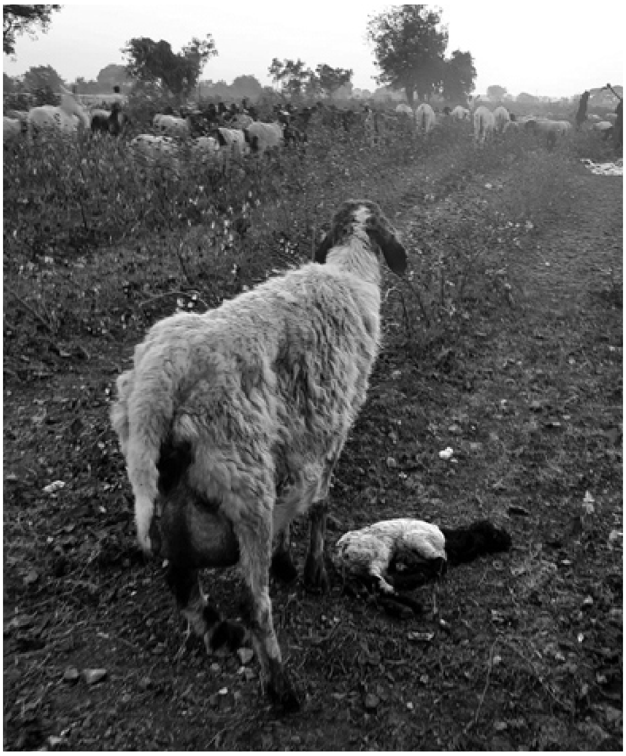

पूरे भारत में प्राचीन काल से ही कृषि–पशु चारागाह / चराई प्रणाली का पारिस्थितिकी के साथ अन्तर्सम्बन्ध प्रदर्शित होता है और पशुधन नस्ल आर्थिक व्यवस्था के एक निर्वाह के रूप में उभरा है। देश भर में घूमन्तू चरवाहों ने कृषि के साथ–साथ पारम्परिक चराई व्यवसाय को स्थाईत्व प्रदान करने के लिए किसानों के साथ सम्बन्ध स्थापित किया है। चरवाहों एवं किसानों के आपसी सम्बन्ध स्थानीय अर्थव्यवस्था को लाभ पहुँचाने की दृष्टि से विकसित हुए हैं, किसानों और चरवाहों को आजीविका के अवसर प्रदान करते हैं और पर्यावरण की दृष्टि से स्थाई होते हैं।

आपसी सम्बन्ध का परिदृश्य

चराई संसाधनों की स्थानिक और अस्थाई उपलब्धता के साथ–साथ विषम मौसमी घटनाओं ने चरवाहों को पूरे देश भर में गतिशील रहने के लिए प्रेरित किया है। बहुत से भारतीय राज्यों में चरवाहों के घूमन्तू रहने स्वरूप के कारण किसानों के साथ पारस्परिक सम्बन्ध हैं। फिर भी, पिछले कुछ वर्षों में देश भर में कृषि के व्यवसायीकरण के कारण यह प्रथा विलुप्त होती जा रही है।

साझा बंधन : पश्चिमी भारत से उपाख्यान

गुजरात के सौराष्ट्र क्षेत्र में चरवाहों को स्थानीय स्तर पर मालधारी–भारवाड़, राबरीज के नाम से जाना जाता है। ये अपने जानवरों के चारा की खोज के लिए राज्य के विभिन्न भागों में घूमते रहते हैं। चारागाह स्रोतों के समाप्त हो जाने के कारण वे चारा के लिए किसानों की खेती पर भी निर्भर करते है। खम्भलिया विकासखण्ड में अपने पैतृक गाँव से देव कहते हैं, ''अधिकाँशतः जब खरीफ फसल ऋतु समाप्त होती है, उस समय कपास की कटाई के बाद खेतों को साफ करने के लिए मजदूरों की आवश्यकता होती है, जबकि हमारे जानवरों को चारा की जरूरत होती है। उस समय हम किसानों के साथ यह अनुबन्ध करते हैं कि हम उनके खेतों को साफ करेंगे और नयी फसली मौसम प्रारम्भ करने के लिए उन्हें उर्वर भूमि उपलब्ध करायेंगे।''

द्वारिका के राजपारा गाँव के एक अन्य दूसरे मालधारी भूपत भाई बूंदिया अक्टूबर अन्त से जून तक लगभग 200 किमी0 की यात्रा करते हैं। वे सम्बन्धों के पीछे के अर्थशास्त्र की व्याख्या करते हुए कहते हैं–''सामान्यतः एक किसान कपास के पौधों को खेत से साफ करने के लिए प्रतिदिन रू0 350 मजदूरी लेता है 5 घण्टे काम करता है। प्रत्येक किसान के पास कम से कम 5 एकड़ खेती होती है। जिसे 10 दिनों में रू0 3500.00 खर्च कराकर वे उसे साफ कराते हैं और अगले सीजन के लिए खेत तैयार कराते हैं। हमारी बकरियां और भेड़ें पूरा दिन चरती हैं। जानवरों के चरने के बाद हमारे परिवार की महिला सदस्य

पौधों को बाँध देती हैं और हम उसके लिए अलग से कुछ नहीं लेते हैं।

प्रवासी चारागाह समुदाय न केवल आर्थिक स्थाईत्व के लिए ऐसे सम्बन्धों की आवश्यकता व महत्व को समझते हैं, वरन् वे यह भी समझते हैं कि इस तरह के बन्धन से पर्यावरण के लिए व्यवहार्य एक सांस्कृतिक सम्बन्ध को भी बनाये रखने में मदद मिलेगी। जामनगर क्षेत्र में आने वाले सेठ वडाला गाँव के एक किसान भीमा भाई का कहना है, ''मैंने 5 मालधारी परिवारों को अपने खेत में ठहरने की अनुमति दी और यह हमेशा से मेरे परिवार द्वारा किया जाता रहा है।'' सभी के लिए उसकी उपयोगिता पर टिप्पणी करते हुए कहते हैं कि ''ये जमीन गोपाल की।'' (अर्थात् सभी जमीन भगवान कृष्ण की है।) भीमा भाई कहते हैं कि ये भेड़ें और बकरियां न सिर्फ हमारे खेत से घास चरती हैं, वरन् उसी खेत में मल–मूत्र का उत्सर्जन करने से खाद मिलती है, जिससे मृदा की उर्वरता बनाये रखने में सहायता मिलती है। आगे उनका कहना है कि मालधारी सदस्य किसानों की आवश्यकता अनुसार उन्हें बकरी का दूध उपलब्ध कराते हैं।

फोटो : रितुजा मित्रा

जामनगर के उपलेता तालुक में अपने कपास के खेत में भेड़ चराने की अनमुति देता एक किसान

आन्ध्र प्रदेश से विश्वास की एक कहानी

आन्ध्र प्रदेश के अनन्तपुर जिले के राप्ताडू मण्डल के किसानों ने आपसी विश्वास के कुछ ऐसे उदाहरण साझा भी किये हैं। कुरूमा समुदाय के अधिकाँश भेड़ पालक चारों की खोज में किसानों के खेतों पर आते हैं। इसके बदले में, किसान उन्हें भोजन, आश्रय और कपड़े देते हैं। किसान की भूमि पर इस तरह के भ्रमण और ठहरने की अवधि को किसानों द्वारा अन्य त्यौहारों की तरह ही एक त्यौहार मनाया जाता है, जहां वे कोरालू पेयसम (बाजरा से बना एक पेय पदार्थ) तैयार करते हैं और दिन में एक बार चरवाहों को देते हैं। अनन्तपुर जैसे स्थानों में, जहाँ चरम जलवायुविक परिस्थितियां बड़े पैमाने पर उत्पन्न होती हैं, वहाँ पर इस तरह के सम्बन्ध न केवल छोटी जोत के किसानों को सुरक्षा प्रदान करते हैं, वरन् चरवाहों की आजीविका को भी एक व्यवसाय के तौर पर सुरक्षा देते हैं।

हिमालयी क्षेत्र की कथाएं

हिमालयी क्षेत्र के जौनसार–बावर के चरवाहे गर्मियों एवं सर्दियों में अपने जानवरों के लिए चारागाहों की तलाश में लम्बवत (गर्मियों में पहाड़ पर जाते हैं और सर्दियों में पहाड़ से नीचे आते हैं) यात्रा करते हैं। वे न केवल किसानों के साथ वरन् क्षेत्र के कारीगरों के साथ भी अनूठा बन्धन / सम्बन्ध प्रदर्शित करते हैं। पश्चिमी हिमालयी राज्य उत्तराखण्ड के जौनसार–बावर के खास चरवाहे अधिकांशतः भेड़ एवं बकरियों का पालन करते हैं। सितम्बर–अक्टूबर में कटाई सीजन के दौरान वे सेब और खुबानी के बगीचों पर निर्भर करते हैं। अधिकाँशतः ये पशुपालक किसानों के खेतों पर जाते हैं और वहां अपने जानवरों को चराते हैं। जब वे पहाड़ से नीचे मैदानी क्षेत्र में होते हैं, उस समय वे सर्दियों की तैयारी के लिए अपने जानवरों के फर को काटते हैं। इस बीच, खास चरवाहे अपने पास भेड़ों से कतरे गये कुछ ऊन अपने पास रखते हैं, जिन्हें वे कोलतास (बुनाई करने वाले कारीगरों) को उनके व्यक्तिगत उपयोग के साथ ही बाजार में बेचने के लिए भी वस्त्र तैयार करने हेतु देते हैं।

किसानों और चरवाहों के इस अनूठे बन्धन/सम्बन्ध को पहले से कहीं अधिक मान्यता दिये जाने की आवश्यकता है।

जौनसार के गोरछा गाँव के स्थानीय निवासी पूरन सिंह चौहान कहते हैं, ''यहाँ अभी भी प्रत्येक परिवार से एक या दो सदस्य पशु चराई के व्यवसाय में लगे हुए हैं। लेकिन, नगदी आधारित अर्थ–व्यवस्था में वृद्धि होने तथा देहरादून–विकासनगर बढ़ने के साथ, अधिकाँश युवा कस्बों व शहरों में चले गये हैं और वर्तमान व्यवसाय पहले की तरह नहीं रह गया है। वह याद करते हैं कि न केवल चरवाहों और किसानों के लिए इस प्रणाली में ह्रास हुआ है, वरन् पशुओं के ऊन से तैयार बहुत से पारम्परिक उत्पाद जैसे– चौरा (भेड़ के ऊन से बना ओवरकोट) खुर्सा (बकरी

के उन से बना गरम जूता), खारसा (बकरी के उन से बनी चटाई) तो अब लम्बे समय से उपयोग में नहीं है।

इस तरह के परिवर्तनों ने कृषि के आस–पास की स्थानीय पारिस्थितिकी प्रणाली के साथ सघन रूप से जुड़ाव रखने वाली पारम्परिक संस्कृति को नष्ट किया है। अब इस क्षेत्र के किसानों को जैविक खाद पाने में काफी कठिनाई का सामना करना पड़ता है और वे अपने खेतों तथा बगीचों में रसायनिक खादों का उपयोग करने के लिए विवश हो रहे हैं। इससे क्षेत्र के हिमालयी पारिस्थितिक प्रणाली को दीर्घकालिक नुकसान हो रहा है।

मान्यता व जुड़ाव की आवश्यकता

जैसा कि हम देखते हैं कि कुछ राज्यों में लोग प्राकृतिक खेती की ओर तेजी से बढ़ रहे हैं, ऐसी स्थिति में चरवाहा समुदायों का किसानों के साथ जुड़ाव होने से आर्थिक और पर्यावरणीय दोनों लाभ होगा। जुड़ाव होने से किसानों को स्थानीय स्तर पर जैविक खाद पाने में सहायता मिलेगी और चरवाहों को इन खादों के बदले किसानों से जो आय प्राप्त होगी, वह उनकी अतिरिक्त आय होगी। पूरे देश भर से पशु चराई प्रणाली के ये उदाहरण प्राकृतिक संसाधनों के प्रबन्धन, स्थानीय जलवायुविक परिस्थितियों को अपनाने तथा मृदा उर्वरता बढ़ाने में पशुओं से प्राप्त खादों से निर्मित आर्थिक और पारिस्थितिक मूल्यों पर उनकी ज्ञान प्रणाली के ऊपर एक समझ प्रदान करते हैं।

पशु चराई और कृषि के बीच अन्तर्सम्बन्धों में एक हरित, पर्यावरणीय स्थाईत्व एवं वैश्विक अर्थव्यवस्था में परिवर्तन

फोटो : साहिथ

अनन्तपुर, किसान के खेत के रास्ते में

में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की क्षमता है। ऐसी प्रणालियों और नीतियों को विकसित करने की आवश्यकता है,

फोटो : रितुजा मित्रा

जौनसार के सेब के बगीचे में अपने जानवरों के झुण्ड के साथ एक चरवाहा

जिससे सदैव नाजुक एवं अत्यधिक अनिश्चित परिस्थितियों में जीवन–यापन करने वाले चरवाहा समुदायों को मजबूती प्रदान की जा सके।

▪

रितुजा मित्रा
रिसर्च एसोसियेट
सहजीवन
ईमेल : rituja@sahjeevan.org

साहिथ गोवर्धनम
कन्सल्टेण्ट
इकोनॉमिक्स सेण्टर ऑफ वर्ल्ड रिसोर्स इन्स्टीट्यूट, भारत
ईमेल : g.sahith17_mad@apu.edu.in

Resilient Crop-Livestock System
LEISA INDIA, Vol.23, No.4, December 2021